ISSN No. 2349-4654
नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक
वर्ष : 4, अंक : 1, जनवरी 2017

संगीत शिक्षण संस्थाओं में शोध का गिरता हुआ स्तर

नेहा त्रिपाठी

शोध छात्रा, संगीत एवं प्रदर्शन कला विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

संस्थाओं द्वारा संगीत शिक्षण में यदि गुण विद्यमान हैं तो निश्चित ही दोष भी व्याप्त है। निश्चित ही संगीत की विद्यार्थी होने के नाते मेरा यह विचार है कि सभी क्षेत्रों में जहाँ गुण हैं वहाँ दोष भी हैं। हमें बुराईयों को दूर करना चाहिए एवं समस्याओं का समाधान करते हुए आगे बढ़ना चाहिए। मेरा विषय ''संगीत शिक्षण संस्थाओं में शोध का गिरता हुआ स्तर'' है। शिक्षण संस्थाओं में लगभग 35-40 वर्षों से अनुसंधान कार्य प्रारम्भ हुआ। ऐसा नहीं है कि कोई तथ्य उजागर नहीं हुये। सम्भवत: अनेक नवीन खोजे हुई। किन्तु आज वर्तमान समय में संगीत में शोधकार्य का संबंध नवीन खोज से उतना नहीं है जितना स्पष्टीकरण अथवा निर्वचन से है। हमारे यहाँ के आचार्य, ऋषि इतने गहन विचार प्रस्तुत कर चुके है कि संगीत में नई खोज या नए सिद्धान्तों की स्थापना के लिए बहुत गुंजाइश नहीं है। आज यदि कोई बात प्रस्तुत की जाती है तो वह नई हो यह जरूरी नहीं। बल्कि उसे कहने का ढंग या तरीका थोड़ा अलग होता है। लेकिन इन्हें शोध नहीं कहा जा सकता। स्थापित सिद्धान्तों का आज के सन्दर्भ में स्पष्टीकरण ही मुख्य रूप से संगीत में शोधकार्य है।[1]

शोध करने के लिए केवल संगीतकार होना पर्याप्त नहीं है। शोधकर्ता में गम्भीर विचार-शक्ति, मनन, अध्ययनशीलता, सामान्य समझदारी तो होनी चाहिए।

शोध कार्य को वर्तमान स्थिति में यदि प्रकाश डाला जाये तो समझ आ जाता है कि किस प्रकार से निरन्तर शोध का स्तर गिरता ही जा रहा है। विश्वविद्यालयों में शोध कार्य व उद्देश्य केवल उपाधि प्राप्त करना हो गया है। चूँकि मैं स्वयं एक शोधार्थी हूँ तो मैंने विभिन्न विश्वविद्यालयों में शोध की स्थिति देखकर इस विषय पर लिखने का प्रयास किया है। शोध से संबंधित पक्षों को मैंने कुछ भागों में वर्गीकृत कर सभी से संबंधित तथ्यों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

जैसे :1. शोधकर्ता, 2. आवश्यक साधन तथा सुविधाये, 3. शोध निर्देशक, 4. शोध प्रबन्ध, 5. प्रकाशन।

1. शोधकर्ता—संस्थागत व विश्वविद्यालयीन शिक्षण प्रणाली में जहाँ छात्रों की संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है वहीं शिक्षा का स्तर लगातार गिर रहा है। लाखों की संख्या में विद्यार्थी स्नातक, परास्नातक कक्षाओं का अध्ययन करके, कुछ परीक्षाओं के द्वारा शोध में दाखिल ले रहे हैं। जबकि उन्हें शोध से सम्बन्धित कोई जानकारी नहीं है, शोध में आना केवल योग्यता का सर्वोच्च प्रमाणपत्र प्राप्त करना है और कुछ नहीं। वर्तमान समय में शोध औपचारिकता मात्र रह गया हैं। ''संगीत संचयन'' पुस्तक के पृ. 266 में ''एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटानिका'' में रिसर्च के संबंध में बताये तथ्यों का उल्लेख किया गया है—

"All teachers, it is felt, Should be familiar with methods or research and should have a scholarly mastery of their fields, but not all have the ability to do research.[2]

आज अनेक विश्वविद्यालयों में संगीत एक विषय के रूप में स्थान प्राप्त कर चुका है। अनेक विद्यार्थी एम.ए. की उपाधि प्राप्त कर चुके है, और अनेक पी.एच.डी. उपाधि से विभूषित हो चुके है।[3] वह लोग पी.एच.डी. के लिए नहीं अपितु आर्थिक लाभ के लिए शोध कार्य कर रहे है। इस अर्थप्रधान युग में यह आवश्यकता भी है किन्तु हमें अपने कार्य के प्रति भी ईमानदार होना पड़ेगा अन्यथा एक समय आयेगा कि शोध की गुणवत्ता समाप्त हो जायेगी।

2. आवश्यक साधन एवं सुविधाएँ—शोधार्थियों के शोध कार्य के लिए शोध संबंधी आवश्यक साधन उपलब्ध होना चाहिए। इसके अभाव में शोध कार्य सुचारू रूप से नहीं सकता। आज जितने भी महाविद्यालय, विश्वविद्यालय व संगीत विभाग हैं जहाँ शोध कार्य किया जाता है वहाँ पुस्तकें, कैसेट, पत्रिकायें, पाण्डुलिपियाँ यह सब उचित मात्रा में उपलब्ध ही नहीं है। अत: जो सामाग्री एक स्थान पर उपलब्ध कराई जा सकती है उसके न होने से इधर उधर भटक कर धन, समय व शक्ति नष्ट करनी पड़ती है। शोधकर्ताओं को शोधकार्य के लिए दी जाने वाली छात्रवृत्तियाँ समय पर और नियमित रूप से न दिये जाने से धन के अभाव के कारण अनेक योग्य छात्रों को शोधकार्य छोड़ देना पड़ता है अथवा अपेक्षित समय से अधिक समय लगाना पड़ता है।

3. शोध निर्देशक—संगीत में शोध का निर्देशन करने के लिए योग्य व्यक्तियों का न होना, यह सबसे बड़ी समस्या है। उचित निर्देशन के अभाव में अच्छे कार्य की अपेक्षा नहीं की जा सकती। निर्देशक के लिए सबसे आवश्यक गुण है, शोध का अनुभव तथा शोध की दृष्टि से सम्पन्न होना। शिक्षण संस्थाओं में अभी भी ऐसे व्यक्ति सम्मानित पदों पर प्रतिष्ठित है जो एक ओर तो ऐसे विचार व्यक्त करते हैं कि संगीत में

डी. लिट् व पी.एच.डी. उपाधि के साथ सात वर्ष तक स्नातकोत्तर कक्षाओं को सिखाने का अनुभव निर्देशक को होना चाहिए और दूसरी ओर शोधकार्य के किसी भी प्रकार के अनुभव अर्थात् शोध उपाधि अथवा विशेष लेखन प्रकाशन के बिना केवल संगीत सिखाने का अनुभव शोध निर्देशन के लिए पर्याप्त योग्यता स्वीकार करते हैं। इन सभी कार्यों को देखते हुए स्थिति ऐसी हो गई है कि दूसरी ओर योग्य व्यक्ति समयाभाव और आवश्यक सुविधाओं के उपलब्ध न होने के कारण या तो निर्देशन करते नहीं अथवा अनेक छात्रों का पंजीयन करा लेते हैं, लेकिन अनेक कारणों से अपेक्षित मार्ग दर्शन नहीं दे पाते, जिससे शोधकर्ताओं का समय नष्ट होता है और उनमें निराशा उत्पन्न होती है।

4. शोध प्रबंध—शोधकर्ता में शोध करने की योग्यता के अभाव में संगीत में जिस स्तर के शोध प्रबंध लिखे जा चुके हैं या लिखे जा रहे है, और जिन पर शोध उपाधियाँ दी जा चुकी हैं, उनमें से कुछ को शोध प्रबंध कहना शोध कार्य का अपमान करना है। उन शोध प्रबंध में किसी भी मनगढ़न्त बातों को सत्य मान लिया गया है। उसमें शोध की क्रियाविधि का पालन भी नहीं किया गया है। ऐसे प्रबन्धों के निर्देशक और परीक्षक विशेष रूप से दोषी हैं, क्योंकि वे अपने कर्तव्य और इस कार्य की गरिमा के प्रति सजग ही नहीं हैं।

5. शोधकार्य का प्रसार व प्रकाशन—शोध की सुविधा के लिए पंजीकृत विषयों और स्वीकृत प्रबंधों की सूची समय पर प्रकाशित न होने के कारण शोध विषयों में पुनरावृत्ति हो जाती है। शोध की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण और उच्च स्तर के शोध प्रबन्धों का प्रकाशन न होने से विद्वानों विद्यार्थियों और शोधकर्ताओं को वह सामाग्री भी उपलब्ध नहीं हो पाती, जो उपलब्ध हो सकती है। प्रकाशित होने के बाद प्रकाशकों के लिए उसकी बिक्री की समस्या रहती है।

शोधकार्य में आने वाली इन समस्याओं के समाधान के लिए कुछ सुझाव है जिसके अनुसार हम कम से कम एक प्रयास कर सकते हैं। शोध की गुणवत्ता सुधारने का—

1. शोध करने की स्वीकृति केवल ऐसे ही व्यक्तियों को दी जाये, जिनमें शोध करने की योग्यता व क्षमता विद्यमान हो।
2. शोध विषय के पंजीकृत होते ही सूची प्रकाशित की जानी चाहिए, आजकल तो आधुनिकता के इस दौर में कम्प्यूटर सबसे उपयुक्त साधन है जिसकी सहायता से हम सूची प्रकाशित होने के पहले भी लोगों को जानकारी दे सकते हैं, इससें विषयों की पुनरावृत्ति कदापि नहीं होगी।
3. नये-नये विषयों पर कार्यशाला व संगोष्ठी का आयोजन किया जाना चाहिए। जिसमें परास्नातक के छात्रों को भी अवसर प्रदान किया जाना चाहिए, जिससे वह शोध कार्य की सत्यता एवं उसकी गुणवत्ता से अवगत हो सकें।
4. निर्देशन ऐसे व्यक्तियों को देना चाहिए जो शोधार्थी को नियमित समय दे सकें एवं जिनमें योग्यता विद्यमान हो। और वह पूर्ण रूप से शोध कराने में सक्षम हों।
5. समुचित साधनों को उपलब्ध कराना चाहिए। जिससे शोधार्थी को लगभग सामाग्री एक स्थान पर उपलब्ध हो सकें। यह दायित्व मुख्य रूप से विश्वविद्यालयों के विभागों व संगीत ग्रंथों के प्रकाशकों का है।

जहाँ संगीत के क्षेत्र की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ, अन्य विषयों के समान इसे प्रतिष्ठा मिली। दिन-प्रतिदिन स्थिति में सुधार आया। शोध कार्य को प्रारम्भ में इतनी सराहना मिली उसमें धीरे-धीरे गिरावट आई। अन्य विषयों से यदि तुलना की जाये तो संगीत का स्तर दिन प्रतिदिन गिर रहा हैं। इस स्तर को सुधारने के लिए हम सभी को प्रयास करना होगा। विश्वविद्यालयीन स्तर पर संगीत की गरिमा को सुरक्षित रूप से बचाकर भावी पीढ़ियों तक प्रेषित किया जा सकता है। यदि हम सब मिलकर व्यवस्था में सुधार लायेगें तो प्रत्येक शिक्षक के साथ-साथ प्रत्येक विद्यार्थी भी अपने विकास के प्रति स्वत: सचेत हो जाएगा। जिससे शोध पक्ष में ही नहीं अपितु संगीत शिक्षण में व्याप्त अनेक समस्याओं का निराकरण संभव हो जाएगा। ऐसा मेरा विश्वास है।

पाद टिप्पणियाँ

1. तिवारी, किरन, संगीत एवं मनोविज्ञान, कनिष्क पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली-110002, पृ. 44
2. सक्सेना, मधुबाला, भारतीय संगीत शिक्षण प्रणाली एवं उसका वर्तमान स्तर, कनिष्क पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली-110002, 2008, पृ. 96
3. चौधरी, सुभद्रा, संगीत संचयन, कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर, पृ. 261, 266
4. नागपाल, अलका, भारतीय संगीत में शोध प्रविधि, राधा पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1996, पृ. 61